International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 09-02-2020; Accepted: 10-03-2020; Published: 11-04-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 2; 2020; Page No. 47-49

समकालीन हिंदी उपन्यासों में वृद्ध विमर्श

डॉ० प्रीति अग्रवाल
Post-Doctoral fellow PGDAV Delhi University Delhi, Delhi, India

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, स्त्रीविमर्श, किन्नर विमर्श के बाद वृद्ध विमर्श की धमक भी सुनाई देने लगी है। वृद्धावस्था को लेकर हमारे मन में एक तस्वीर उभारती है। जो सफेद बालों, शिथिल शरीर और गिरे हुए दांतो के साथ अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। वृद्धावस्था धीरे–धीरे आने वाली वह अवस्था है जो प्राकृतिक घटना है। वृद्ध का शाब्दिक अर्थ होता है – पका हुआ या परिपक्व। काल की गति क्षिप्र है। एक नवजात शिशु कब अपनी शैशवास्था छोड़कर युवावस्था में पहुंच जाता है, यह पता ही नहीं चल पाता। वृद्धावस्था जीवन का सत्य है इससे कोई भी नहीं बच सकता। भारतीय परंपरा में वृद्धों का मान सम्मान किया जाता रहा है। कहा जाता रहा है–

"अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विधा यशो बलम"

अर्थात प्रतिदिन बुजुर्गों को प्रणाम करने और उनकी सेवा करने वाले व्यक्ति की आयु, विद्या, शक्ति और यश में वृद्धि होती है। लेकिन आज मूल्य बदल रहे हैं व्यक्ति जैसी वृद्धावस्था की ओर बढ़ता है वैसे वैसे अकेलापन, भय और असुरक्षा की भावना उसे घेर लेते हैं। समाज में वृद्धों की जो प्रमुख समस्याएं जो देखने को मिलती हैं वह है – शारीरिक और मानसिक तनाव, आर्थिक असमर्थता, पुरानी और नई पीढ़ियों में मानसिक टकराहट, बेगानेपन का भाव और परिवार से अलगाव। वैसे आजकल जिस तरह नई पीढ़ी, युवा पीढ़ी की चर्चा जोरों पर है उसे देखते हुए वृद्ध विमर्श का होना भी उचित ही लगता है। विमर शब्द को साधारण अर्थ में विचार, विवेचन तथा परीक्षण के रूप में लिया जाता है। किसी भी समस्या या परिस्थिति को देखकर उनके प्रति सांस्कृतिक, मानसिक और वैचारिक धारणाओं का समाहार करते हुए पूर्णरूप से चिंतन करना तथा उसे समझने का प्रयास करना ही विमर्श है। हिंदी में क्पेबवनतेम शब्द से ही विमर्श शब्द आया है जिसका अर्थ है सुदीर्घ तथा गंभीर चिंतन से लिया जाता है। विमर्श शब्द का अर्थ वास्तविक रूप में जीवंत बहस होता है। वृद्ध विमर्श का अर्थ है वृद्धावस्था की परिस्थितियों घटनाओं का आदि का चिंतन करना, उनकी समस्याओं को समझकर उनके लिए उचित समाधान करना। संयुक्त परिवार के एकल परिवारों में बदलने के कारण हम ना तो बुजुर्गों की तरफ ध्यान दे पा रहे हैं और ना ही हम उनको समझने का प्रयास ही करते हैं। आज वृद्ध को एक बोझ समझा जाता है। समाज में उचित सम्मान ना मिलने के कारण वृद्ध व्यक्तियों का जीवन निराशा की तरफ बढ़ता जाता है। आज वृद्धों की संपत्ति तो नई पीढ़ी को महत्वपूर्ण लगती है लेकिन उनका ज्ञान और अनुभव उन्हें बकवास लगता है। वृद्धों के लिए खोले गए वृद्धा आश्रम आज व्यवसाय का रूप लिए खड़े हैं और फिर भी युवा पीढ़ी उन्हें इस अंधकार में ढकेल रही है। आज वृद्धावस्था को एक नई दृष्टि से देखने की आवश्यकता है जिसमें बुजुर्गों के प्रति संवेदना हो और उनके प्रति आदर और सम्मान का भाव हो। डॉ ऋषभ देव शर्मा ने लिखा है –

"(1) आज हमारी चिंता का विषय विशाल वृद्धजन समुदाय के जीवन को सुखमय बनाने से संबंधित है – चाहे वे पुरुष हो या स्त्री। यही कारण है कि वृद्धावस्था से जुड़े वृद्धाश्रम तक के अथवा देह से आयु तक के क्षीण होने के मुद्दे चिंतन और सृजन के विविध मंचों पर छाए हुए हैं यदि यह कहा जाए कि आज का मनुष्य बुढ़ापे और मौत से कुछ ज्यादा ही आंतकित है तो भी शायद गलत ना होगा। (1)"

समकालीन हिंदी उपन्यासों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कोई एक दर्जन उपन्यास हमें बुजुर्ग पीढ़ी के असंतोष, उनकी समस्याओं पर भी देखने को मिल जाते हैं। उपन्यासों के अलावा कई दर्जन कहानियां वृद्धविमर्श करती हुई नजर आ रही है। वृद्ध जीवन को लेकर लिखे गए समकालीन उपन्यास है – मस्तराम कपूर का विषय – पुरुष (1997), पंकज बिष्ट का उपन्यास – उस चिड़िया का नाम (2005), काशीनाथ सिंह का 'रेहन पर रम्धू' (2006), चित्रा मुद्गल – गिलिगडू (2010), निर्मल वर्मा का उपन्यास– अंतिम अरण्य (2011), हृदयेश – चार दरवेश (2011), अज्ञेय का उपन्यास – अपने अपने अजनबी, कृष्णा सोबती – समय सरगम, ममता कालिया – दौड़, रविंद्र वर्मा – पत्थर ऊपर पानी और डॉक्टर सूरज सिंह नेगी के तीन उपन्यास रिश्तो की आंच (2016), वसीयत (2018) और नियति चक्र (2019), विजय शंकर राही का उपन्यास 'जीने की राह' आदि है।

चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'गिलिगडु' मैं बाबू जसवंत सिंह और रिटायर्ड कर्नल स्वामी इन दोनों मित्रों की कथा कही गई है। उपन्यास इन दोनों पात्रों के जीवन के इर्द–गिर्द घूमकर इन्हीं दोनों के साथ समाप्त हो जाती है। बाबू जसवंत सिंह अपने बेटे नरेंद्र के इंजीनियरिंग की पढ़ाई के लिए अपने भविष्य निधि की रकम तोड़ देते हैं लेकिन अपनी पत्नी के स्वर्गवास के बाद बदहवास से हो जाते हैं। अपने पुत्र नरेंद्र के साथ उन्हें दिल्ली में रहना पड़ता है। उनकी प्रतिदिन की ड्यूटी होती है कि वह सुबह टॉमी को बाहर मैदान में ले जाकर फारिग कराएं। जसवंत सिंह अपने मित्र के साथ अपना सुख दुख बांटते हैं। परिवार के सदस्यों के पास उनके लिए समय नहीं होता। बाबू जसवंत सिंह का कमरा खाली करवाकर उन्हें बालकनी में बने स्टोर रूम में शिफ्ट कर दिया जाता है। जसवंत सिंह अपने बेटे से कहते भी हैं कि कमरा अच्छा नहीं है पर नरेंद्र को इनसे कोई फर्क नहीं पड़ता। ऐसे में मनुष्यों की स्थिति एक कुत्ते से बदतर हो कर रह जाती है। वह ना तो जी पाता है और ना ही मर पाता है। बाबू जसवंत सिंह ने अनेक मुसीबतों से अपनी बीवी के लिए गहने बनवाए थे लेकिन उनका बेटा, बहू, बेटी लॉकर सरेंडर करने के लिए दबाव बनाते हैं। यह उपन्यास रिश्तो की खोखली मानसिकता को बखूबी चित्रण करता है। बच्चों को यह तो याद नहीं रहता कि मां–बाप ने उनकी परवरिश में कितनी समस्याओं को झेला होगा या उन्हें अब उम्र के इस दौर में उनका सहारा बनना चाहिए। वह यह याद रखते हैं कि मां–बाप के रुपयों और प्रॉपर्टी पर उनका ही हक है। इस उपन्यास का एक प्रसंग है –

“(2) तबीयत कैसी है? दवा–पानी ठीक से ले रहे हैं? घुमाई हो रही? अचानक शालिनी ने पैंतरा बदला। बाबूजी, कानपुर वाला लॉकर आप सरेंडर क्यों नहीं कर देते? दिन में फोन करने का उद्देश्य प्रच्छन्न नहीं रहा। भाई बहन में आपस में बात हुई है। यह भी कि इस मुद्दे को लेकर रात भर नहीं ठहरा जा सकता था। (2)”

आधुनिकीकरण और व्यक्तिवादिता ने सामाजिकता रिश्ते नाते और संस्कारों को आमूलचूक बदल डाला है। जसवंत सिंह अपने पोते के जन्मदिन की पार्टी देना चाहते थे लेकिन उनका पोता स्पष्ट कह देता है – हम अपने से बड़े किसी को भी ना ले जाएंगे वरना पार्टी बोरिंग हो जाएगी। जसवंत सिंह के बेटे और बहू सुनैना का उनके प्रति व्यवहार इतना कठोर है कि वे दोनों उनका अपमान और तिरस्कार करने का कोई अवसर नहीं चूकते। अपना घर होने पर भी वह इतनी हिम्मत नहीं जुटा पाते की किसी को एक कप कॉफी पीने का न्यौता दे।

अपने उपन्यास 'तिनके तिनके पास' में अनामिका ने दिखाया है कि बुढ़ापे में जब वृद्ध अपनी जमीन छोड़कर बच्चों के पास शहरों में आ जाते हैं तब अनेक सुविधाएँ चाहे मिल जाए पर वह खुशी का अनुभव नहीं कर पाते हैं बार–बार अपमान का घूँट पीकर वह टूट जाते हैं। अकेलेपन की व्याकुलता से पीड़ित यह एक नये परिवार का सृजन कर लेते हैं जो भाव–संबंध पर आधारित होता है। लेखिका लिखती है –

“(3) वे तो जैसे गूँगी ही हो चली.... फिर धीरे–धीरे सब्जी वाले दूध वाले, कबाड़ी वाले और एक दो पड़ोसी। पड़ोसिनी के साथ उनका जो छिटपुट संवाद शुरू हुआ उसमें नए तरह के संबंध विस्तार को अच्छी खासी गुंजाइश होने लगी। (3)”

इस उपन्यास का पात्र भगवंती बुआ ने भी अपने बच्चों को बड़े लाड प्यार से पाला था। लेकिन जब बुआ वृद्धि हुई तब उन्होंने अपमान महसूस किया, बच्चों की उपेक्षा देखकर उन्होंने यह फैसला किया कि वह किसी पर बोझ नहीं बनेगी। शहर जाकर वह छोटा सा सब्जी का व्यापार शुरू करती है। भगवंती बुआ यह समझ चुकी थी कि आज से जुड़ने के लिए पूर्वाग्रहों को भूलना होगा। वह कहती है –

“(4) जब से घर छूटा था, पर लोक का डर भी मन से निकल गया था!.... इतने बरस नियम अगोरे उससे क्या हो गया। कितना सुख काटा। जरा लाँघकर भी तो देखे। पूरे मोहल्ले का असर था उनका रोबीला बतरस। (4)”

अनामिका मानती है कि बेटों की बजाय बेटियों के साथ मां–बाप अधिक सुरक्षित हैं –

“(5) अभिभावकों को अपने पास रखने का मौका गँवा दिया है– चांद एक्जास्ट कर दिया है.... एक मौका लड़कियों को दीजिये..... इससे भ्रूण हत्यायों में भी कमी होगी। (5)”

ममता कालिया ने 'दौड़' उपन्यास में उपभोक्तावादी संस्कृति को दर्शाया है। ममता कालिया ने इस उपन्यास में इस कटु सत्य को भी प्रदर्शित किया है कि बच्चे आजकल प्रवासियों की तरह हो गए हैं जो पराया देश, वहां की नौकरी और झमेलों में ऐसे फंसे हैं कि मां–बाप को भूल बैठे हैं। मिस्टर और मिसेज सोनी ऐसे ही मजबूर माता–पिता है। उनका बेटा सिद्धार्थ विदेश में जाकर बसा है। मिस्टर सोनी को अचानक दिल का दौरा पड़ता है और भी गुजर जाते हैं। जब सिद्धार्थ को बुलाया जाता है तब वह मां को समझाता है –

“(6) हम सब तो आज लुट गए मां । लोग बता रहे हैं मेरे आने तक डैडी को रखा नहीं जा सकता। आप ऐसा कीजिए इस काम के लिए किसी को बेटा बना कर दाह संस्कार (क्रिया–कर्म) करवाइए। मेरे लिए तेरह दिन रुकना मुश्किल होगा। (6)”

अपने माँ बाप को भूल कर आज की युवा पीढ़ी एक दौड़ में भाग रही है।

“(7) यूएनपीएफ (न्छच्थ्) के आकलन के मुताबिक देश के ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में कुल मिलाकर 20 फीसदी बुजुर्ग अकेले या अपने जीवन साथी के सहारे अपना जीवन काटने को विवश हैं। तमिलनाडु में यह स्थिति 50 फीसदी से अधिक आ चुकी है जबकि गोवा, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, केरल में यह दर काफी ज्यादा है। (7)”

'समय सरगम' उपन्यास में कृष्णा सोबती ने दिखाया है कि कैसे वृद्धावस्था में अकेलापन बोझ बन जाता है।इस उपन्यास में कामिनी और दमयंती जैसी स्त्रियों के माध्यम से वृद्ध जीवन की अनेक समस्याओं को मुखरित किया गया है। दमयंती अकेले रहती है और अरण्या से अपने मनोभाव व्यक्त करते हुए कहती है –

“(8) बच्चे साथ रह रहे हैं मेरा घर मेरा किचन चल रहा है। खर्चा मैं कर रही हूं और मैं अकेली पड़ी हूं। बिना इजाजत के मेरा सामान इधर से उधर करते रहते हैं। पीछे आश्रम गई तो माधव को धमकाते रहते हैं। बताओ ममा लॉकर की चाबी कहां है..... कुछ कहो अरण्या। (8)”

'चार दरवेश' उपन्यास में ह्दयेश ने चार वृद्धों– रामप्रसाद गुप्ता, शिवशंकर, दिलीपचंद और चिंताहरण के माध्यम से वृद्धि जीवन के तिक्त अनुभव, उनमें जीवन की उत्कट चाह, समाज से उनके अलगाव की पीड़ा को बारीकी से उद्‌घाटित किया गया है। ये वृद्ध सूखे नाले की पुलिया पर बनी फसीलनुमा मुंडेर पर रोज साथ बैठकर अपने दुख सुख बांटते हैं। इनकी यह चर्चा समाज में आ रहे भौतिकतावादी बदलावों की ओर इशारा भी करते हैं।

“(9) पहले जमाने के खिलौनों से बच्चों में कोमलता जागती थी। उनमें प्रेमभाव पनपता था, आज के खिलौनों से बच्चों में नफरत पैदा होती है, वे ज्यादा उग्र हो गए हैं। (9)”

एक अन्य स्थल पर लेखक ने लिखा है– “कलयुग में दया, ममता नाता रिश्ता कुछ नहीं है। बस हैं मैं और मैं।” उपन्यास में वृद्ध जीवन की उथल–पुथल, उनके दुख दर्द का चित्रण इतनी विश्वसनीयता से किया गया है कि हम वृद्ध जीवन के बहुत करीब पहुंच जाते हैं। वृद्धावस्था में बच्चे और बूढ़े एक जैसे हो जाते हैं। उपन्यास में एक ऐसा प्रसंग है रामप्रसाद पेशाब करते हुए अक्सर अपना पजामा गीला कर बैठते हैं। बेटी के टोकने पर वह सादगी से कहते हैं –

“(10) जानबूझकर तो भिगोता नहीं। बूढ़ा हूं। बच्चों की तरह बहुत कुछ संभलता नहीं। (10)”

पंकज बिष्ट के उपन्यास “उस चिड़िया का नाम” उपन्यास में कथा हरीश के पिता की बीमारी से प्रारंभ होती है। कथा पिता की मृत्यु के पश्चात भी उनके इर्द–गिर्द घूमती रहती है। दीवान सिंह अधिकारी जो एक रिटायर्ड अध्यापक हैं 65 वर्ष की आयु में ब्रेन हेमरेज हो जाता है। पिता की मृत्यु के पश्चात हरीश मृत्यु के बाद किए जाने वाले कर्मों में भी रुचि नहीं दिखाता है। पंकज बिष्ट ने इस उपन्यास में माता–पिता तथा संतान के संबंधों में टकराव की स्थिति को उजागर किया है।

वृद्ध हमारे मार्गदर्शक और प्रेरणा के स्रोत हैं। उनके पास अनुभवों का खजाना है। उनके अनुभवों का लाभ लेकर हम जीवन के सही मार्ग पर चलकर सफलता प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान समय में बुजुर्ग लोगों की उपयोगिता नाती पोतों और घर की रखवाली तक ही सीमित रह गई है। काशीनाथ सिंह के उपन्यास 'रेहन पर रग्धु' में एक वृद्ध पिता के परिवार से मोहभंग की

स्थिति दिखाई गई है। परिवार का बिखरना, बूढ़े रघुनाथ का अकेलापन, बेटों से दूरी, जमीन जायदाद के झगड़े और अन्ततः रघुनाथ का अपहरण। रघु के दोनों बेटे उनसे दूर चले जाते हैं और बार–बार बुलाने पर भी नहीं आते हैं। अंतिम समय में वह दोनों बेटों से आकर जमीन बेचने के लिए कहता है क्योंकि वह अकेला यह काम नहीं कर सकता। वह बड़े बेटे के द्वारा छोड़ी गई पत्नी के साथ रहता है। गिलिगडु उपन्यास में जब कर्नल स्वामी नोएडा वाला घर बेचने से मना कर देते हैं तो उनका बेटा श्री नारायण क्रोध में आकर उन पर हाथ उठा देता है। लहूलुहान कर्नल स्वामी को पुलिस की मदद से अस्पताल ले जाया जाता है लेकिन होश आने पर वह अपने बेटे के खिलाफ एफ आई आर दर्ज कराने से मना कर देते हैं।

गोविंद मिश्र के उपन्यास 'शाम की झिलमिल' में बुढ़ापे में अकेले हो जाने पर भी जीने की उद्यम लालसा को बखूबी साकार किया है इस उपन्यास में शाम जीवन में मृत्यु के अधिकार से पहले का पैर है। शाम की झिलमिल का बूढ़ा 70 वर्ष की उम्र के आसपास पहुंचा हुआ लगता है। इस उम्र की इच्छाएं और व्यवस्थाएं उपन्यास में उजागर की गई हैं –

"(11) जिस रास्ते से यहां तक आया, वह आगे जाता नहीं दिखता। आस पास कोई अलग रास्ता – दूसरा,तीसरा, दाएं,बाएं भी नहीं कि उसे पकड़कर चलूं, चलता चला जाऊं... देखूं कि कहां कहां ले जाता है। जीवन में जो हो सकता था हो लिया – प्रेम, नौकरी, तरक्की, धनोपार्जन गृहस्थी.... इन सब के तनावों,उनके गली कूचों से गुजर लिया। नए तनावों को ढूंढने, उन्हें जीवन में लाने की तरफ भी निकला... थोड़ा दूर चले तो बोर्ड लगा दिखा – 'आगे रास्ता बंद है' तो अब किधर? (11)"

आधुनिक युग में वृद्धजन अपने आप को बेहद फालतू और अनुपयोगी समझता हुआ घोर एकाकीपन तथा उपेक्षा का शिकार होते जा रहे हैं। सही मायने में उम्र बढ़ने का अर्थ निष्क्रिय होना नहीं है बल्कि समाज और देश के लिए अधिक उपयोगी बनकर सार्थक और जीवंत जीवन जीना है। समाज में बुजुर्गों की तीन श्रेणियां हैं– एक वे जिनका कोई परिवार नहीं इसलिए अकेले रहने को अभिशप्त हैं, दूसरे वे जो भरा पूरा परिवार होते हुए भी अकेले रहने को बाध्य हैं और तीसरे वे जो परिवार में रहकर भी अकेले हैं। वर्तमान में बुजुर्गों की स्थिति के संदर्भ में लेखिका क्षमा शर्मा लिखती हैं –

"(12) अपनों द्वारा ठुकराए जाने का जो मलाल होता है उसका क्या कोई इलाज है? उस अकेलेपन और अपमान का एहसास दिलाते हैं कि उनकी जरूरत अब घर में तो क्या इस धरती पर ही नहीं रही। उन्होंने जिनके लिए अपनी उम्र और अपने सारे संसाधन लगा दिए,वे ही दो जून की रोटी के लिए दुत्कारते हैं। (12)"

दुनिया की आबादी में एक बड़ी तादाद बुजुर्ग लोगों की है। इंसान को उम्र के इस आखिरी पड़ाव में अच्छी देखभाल मिले यह एक बड़ा प्रश्न है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हर बुजुर्ग को वित्तीय रूप से आत्मनिर्भर बनाया जाए ताकि वह अपनी देखभाल का इंतजाम कर सके। इसके लिए परिवार, समुदाय और सरकार को हर स्तर पर प्रयास करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1ण वृद्धावस्था विमर्श, चंद्रमौलेश्वर प्रसाद, परिलेखन प्रकाशन, पृ० 11
2ण गिलिगडू, चित्रा मुदगल, सामयिक प्रकाशन, पृ० 94
3ण तिनका तिनके पास, अनामिका, पृ० 76
4ण तिनका तिनके पास, अनामिका, पृ० 286
5ण तिनका तिनके पास, अनामिका, पृ० 298
6ण वृद्धावस्था विमर्श, चंद्रमौलेश्वर प्रसाद, परिलेख प्रकाशन, नजीबाबाद, पृ० 11
7ण गिलिगडू, चित्रा मुदगल, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० 94
8ण दौड़, ममता कालिया, पृ० 65
9ण बोझ नहीं जिम्मेदार है बुजुर्ग, हर्ष मंदिर, डॉ० कमलेश सिंह, दैनिक भास्कर, पृ० 4
10ण समय सरगम, कृष्णा सोबती, पृ० 4
11ण चार दरवेश, छदयेश भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2011, पृ० 10
12ण शाम की झिलमिल, गोविंद मिश्र, किताबघर प्रकाशन, 2017
13ण संजय गुप्ता, दैनिक जागरण, रविवारीय अंतराल के अंतर्गत अपनों की अनदेखी का दर्द, नई दिल्ली– 11 जून 2017